International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 14 Issue 12, Dec 2024,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081 UGC Approved Journal Number: 48887
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बौद्ध साहित्य में वर्णित कृषि अर्थव्यवस्था के संदर्भ में : एक अध्ययन

संतरा देवी

शोधकर्त्री इतिहास एंव पुरातत्व विभाग चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

डॉ॰ नीलम रानी

सहायक आचार्या : इतिहास एंव पुरातत्व विभाग चौधरी देवीलाल विश्वविद्यालय, सिरसा

शोध सार :

कृषि भारतीय समाज की रीढ़ की हडडी रही है और बौद्ध कालीन अर्थव्यवस्था में कृषि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। उसी समय लोहे के प्रयोग ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व में कृषि कार्य में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया और अब व्यापार भी वस्तु विनमय के स्थान पर मुद्रा विनमय के माध्यम से होने लगा था और इस व्यापारिक व्यवस्था के कारण तत्कालीन समाज में धन एकत्र करने की होड़ लग गयी जो की कृषि कार्य करके प्राप्त किया जा सकता था। क्योंकि इसी समय वाणिज्यक फसलों के रूप में ''ईख, कपास व मसालों'' की खेती की जाती थी परन्तु आर्थिक लाभ लेने के लिए सभी वर्ण के व्यक्ति कृषि करने लगे थे।

मुख्य शब्द : कृषि, सभ्यता, क्रन्तिकारी, वाणिज्यीकरण, सकारात्मक, अर्थव्यवस्था, बौद्ध साहित्य, आदि।

शोध पद्धतिः

प्रस्तुत शोध पत्र में शोधकर्त्री द्वारा मुख्य दो प्रकार के स्त्रोतों प्राथमिक और द्वितीयक के साक्ष्यों का तुलनात्मक अध्ययन विश्लेषणात्मक पद्धति के आधार पर किया गया है, और आगमन एवं निगमन दोनों विधियों का प्रस्तुत शोध पत्र में यथासंभव उपयोग किया गया। जिससे कि संतुलित, व्यवस्थित, साक्ष्यसंगत और तार्किक निष्कर्ष निकाले जा सके है।

विषय विस्तार :

प्राचीन काल से ही कृषि भारतीय समाज की रीढ़ की हड्डी रही है। कृषि के साथ ही सभ्यता का प्रारम्भ हुआ और मानव ने घुमक्कड़ जीवन त्याग कर स्थायी जीवन में प्रवेश किया तो सर्वप्रथम कृषि करना शुरू किया और फिर सभ्यता की और बढ़ता चला गया छठी शताब्दी ईसा पूर्व के बाद आर्थिक जीवन में महत्वपूर्ण परिवर्तन आया इसी समय लोगो को प्रमाणिक तौर पर लोहे का ज्ञान हो चूका था और इस ज्ञान के बलबूते लोहा निर्मित कृषि उपकरणों द्वारा अन्न उत्पादन क्षमता में क्रान्तिकारी वृद्धी हुई और इन लोहा निर्मित कृषि उपकरणों व औजारो से कृषि कार्य में लगे लोगो की अर्थव्यवस्था का वाणिज्यीकरण हुआ और बढती अर्थव्यवस्था के कारण भारत का विदेशों से व्यापार बढ़ने लगा। प्रारंभ में व्यापार के लिए वस्तु–विनिमय की

प्रथा थी तथा दूर–दूर के व्यापारी भी वस्तु–विनिमय[1] के द्वारा व्यापार करते थे परन्तु छठी शताब्दी ईसा पूर्व के आस–पास के समय में आहत मुद्रा का विकास हुआ और कुछ समय बाद स्वर्ण मुद्रा का प्रचलन विनिमय माध्यम के रूप में शुरू हो चूका था। इन माध्यमो के कारण व्यक्तिगत पूंजी बढ़ने लगी और वस्तु का पहली बार क्रय–विक्रय होने के कारण उत्पादन का स्वरूप मुनाफे और धन एकत्र करने की और होता गया परिणाम स्वरूप, कृषि में ज्यादा लोगो को लगया जाने लगा। राज्य द्वारा ऋण दिया जाने के कारण ज्यादा से ज्यादा भूमि पर कृषि कार्य होने लगा। अब कृषि अर्थव्यवस्था का मुख्या भाग बनी चुकी थी[2]। इसी समय समाज में बौद्ध धर्म भी अपने पैर जमा रहा था। बौद्ध चिंतक जागरूक और सचेत थे, इसके अहिसांत्मक विचारधारा का पशुपालन और कृषि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा था। बौद्ध चिंतक कृषि की आवश्कताओं और समस्याओं से भली भांति परिचित थे। अपने उपदेशो में उन्होंने इनका विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए उपचारात्मक विचार प्रस्तुत किये, उस समय की कृषि आधारित अर्थव्यवस्था पर बौद्ध विचारधारा का व्यापक प्रभाव पड़ रहा था। जिससे किसानों की सामन्य जीवन शैली में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए, जिसकी पुष्टि तत्कालीन पाली ग्रंथो से होती है।

प्रस्तुत शोध पत्र अनुसार तत्कालीन समाज में कृषि राज्य की अर्थयवस्था का सबसे महत्वपूर्ण स्त्रोत थी। जनसंख्या का जायदातर भाग किसानों का था, जो उस समय भूमिधर कहलाते थे। इस समय वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित ना होकर लगभग जन्म आधारित हो चुकी थी परन्तु अभी भी कुछ लोग अपने व्यवसाये के अतिरिक्त अन्य कार्य भी अपना लेते थे। बौद्ध ग्रन्थ ''मझिम निकाय'' में सध्यान्तिक रूप से चार वर्णों का वर्गीकरण प्रस्तुत किया गया है, जिसमें ब्राह्मण शिक्षा और भिक्षा से, क्षत्रिय तलवार से और वैश्य खेती व पशुपालन तथा शुद्र तीनों वर्णों की मदद करके अपना जीवन यापन करेगा[3]। प्रारम्भिक बौद्ध ग्रंथो के आधार पर कहा जा सकता है, कि कृषि वैश्य वर्ण के अतिरिक्त अन्य वर्णों के लोग भी करते थे। जातको में यह वर्णन मिलता है कि कृषि करने वाले ऐसे कस्सक ब्राह्मण थे, जो लगभग एक हजार कृषि उत्पादक भूमि पर अपने दासो की सहायता से कृषि कार्य करते थे, जो उनका महत्वपूर्ण आर्थिक स्त्रोत था[4]। रिचर्ड फीक के अनुसार बौद्ध काल में ज्यादातर कृषि योग्य भूमि पर ब्राह्मणों का अधिकार था[5]। ब्राह्मणों द्वारा किये जाने वाले

[1] *वैजयंती कोष,* श्री पाण्डितेश्वर प्रेस, 1898, पृ.123.

[2] कुमार ऋतेश, *प्राचीन भारत में व्यापार–व्यवस्थाः एक सर्वेक्षण,* बृजवासी पुस्तक भंडार, 2008 पृ. 177.

[3] *मझिम निकाय,* अनुवादक, भंते आन्जान, मझिम निकाय–बुद्ध के मध्यकालीन उपदेश, बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी, 2005 पृ. 180.

[4] *जातक भाग–3,* अनुवादक भंते सियारन, बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी, 2001, पृ. 293, भाग–4, पृ. 276.

[5] आर. सी. मजुमदार, फिक रिचर्ड, *द सोशल आर्गेनाइजेशन इन नार्थ–ईस्ट इंडिया इन बुद्धा टाइम्स,* बुद्धिस्ट पब्लिकेशन कलकत्ता, 1940 पृ0 241.

अब्राह्मण कार्यो की सूचि ''दस ब्राह्मण जातक''[४४] में मिलती है, जो इस और इसारा करती है कि बहुत से ब्राह्मण कृषि के साथ–साथ पशुपालन भी करते थे। काशी भारद्वाज इसके उदाहरण है[४५]।

पाली साहित्या में कृषि करने वाले दो प्रकार के ब्राह्मण बताये गये पहला ''महाशाल अर्थात चुम्बक'' ये बहुत धनी और सोना चंदी आदि सभी ऐश्वर्या से परिपूर्ण बड़े–बड़े महलों के स्वामी थे। इन ब्राह्मणों के ग्राम को ब्राह्मण ग्राम कहा जाता था और इन ग्रामो में इनकी संख्या भी अधिक होती थी इन्होने कृषि द्वारा अपनी आर्थिक स्थति को काफी ज्यादा मजबूत कर लिया था[ः]। मगध व कौशल जैसे राज्यों में इन भू–स्वामी ब्राह्मणों की संख्या 29 थी। इनके भू स्वामी के बारे में उल्लेख है, कि ये चम्पा में 2, कौशल 11, व राजग्रह में 6, श्रावस्ती में 10 थे और इन ब्राह्मण ग्रामों में आर्थिक व जनसख्या के आधार पर ब्राह्मणों का वर्चस्व था। परन्तु अन्य लोग भी इन ग्रामो में निवास करते थे। पाली ग्रंथो में हल चलाने का विवरण प्राप्त होता है। जिसमें सजे–धजे 500 हलवाहे का खेत आकर भूमि जोतना और फिर उसमें बीज बोना मुख्या था। कृषि कार्य लगभग सभी वर्ण के लोग किया करते थे, क्योंकि आर्थिक स्थिति को मजबूत करने का एक मात्र रास्ता यही था व इसके माध्यम से ही इस समय पशुपालन और व्यापार का कार्य बढ़ रहा था[''']। तत्कालीन राज्यों द्वारा भी इसके लिए प्रबंध किये गए थे। राज्यों द्वारा नियुक्त किये जाने वाले अधिकारियों में से ''ग्राम भोजक'' का मुख्य कार्य कर एकत्रित करना व ग्राम की लुटेरे और अत्याचारियों से सुरक्षा करना था जो की ग्राम में आकर कृषि और मवेशियों को नुकशान पहुंचाते थे। जिसे ग्राम और राज्य दोनों को आर्थिक नुकशान सहना पड़ता था[४४४]।

वर्तमान समाजिक स्थिति अनुसार बौद्ध काल में ग्रामीणों को स्थानीय मामलो में स्वयं निर्णय लेने का आधिकार था। वे अपने मुखिया का चुनाव भी खुद किया करते थे। कृषि दासो के रूप में उस समय समाज में एक बहुत बड़ा वर्ग मोजूद था, जो कृषि कार्य में बड़े किसानो की मदद किया करते थे[४५५]। ऐतिहासिक उल्लेखो में एक बहुत बड़ी चारागाह का वर्णन बुद्धघोस की टीका से प्राप्त होता है। जिसमें हजारो की संख्या में श्रमिक **दास पशुओं की देख-रेख में लगाये गये थे। इसके अतिरिक्त भी काफी वर्णन** कृषि दासो का मिलता है, जो की मध्यम आकार के खेतों में भी श्रमिक दास का कार्य करते थे। ये दास बौद्ध संघो में प्रवेश नहीं पा सकते थे, परन्तु आरमिक या कपियाकराकस के नाम का वर्णन मिलता है

□□ *जातक, पूर्वोक्त,* पृ. 359-365.

□□ *सयुंक्त निकाय,* सम्पादक– भिक्षु बोधि, सारस्वत प्रकाशन, 2003, पृ. 170–172, *मिलिन्दपन्हो,* सम्पादक– भिक्षु सुमेध, बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी, 1985, पृ.8.

ः मिश्रा, शोभा, प्राचीन भारत में कृषक, *प्राचीन भारत में कृषक,* कला प्रकाशन वाराणसी, 2009. पृ. 64.

''' मिश्रा, शोभा, *पूर्वोक्त,* पृ. 64.

[४४४] *जातक, पूर्वोक्त,* पृ. 354.

[४५५] *जातक, पूर्वोक्त,* पृ. 454, पृ. 163, पृ. 67, 276–77, पृ.336.

जो की शायद उस समय मठों में सेवकों के रूप में शामिल कर लिए जाते थे। 500 आरामिक संघ को दान देने का एक विवरण ''विनयपिटक'' से मिलता है जो की संघ की भूमि पर कार्य करके संघ की आर्थिक रूप से मदद किया करते थे[६६६]। श्रमिक दास ज्यादातर अपने मालिक के घर पर रहते थे, ये भोजन और कपडे के लिए उन पर आश्रित थे और कभी–कभी इन्हें वेतन भी मिलता था['''']।

बौद्ध साहित्य से मिलने वाले संदर्भ अनुसार समाज में कृषि का स्थान सबसे ऊंचा था। व्यवसायों में पशुपालन और व्यापार की तुलना में कृषि को प्रथम स्थान दिया गया था[४४४४]। शोधकर्त्री को बौद्ध ग्रन्थ ''सयुंक्त निकाय'' से मिले प्रमाण अनुसार तीन प्रकार की कृषि होती थी जिसमे प्रथम उत्कृष्ट कृषि जिसकी तुलना भिक्षुओं से द्वितीय मध्यम श्रेणी की कृषि जिसकी तुलना उपासकों से और तीसरे प्रकार की कृषि निम्न थी जो की अन्य धार्मिक समुदाये श्रमणों व ब्राह्मणों, सन्यासियों द्वारा की जाती थी। कृषि कार्य करने वालों की तत्कालीन समाज में सम्मानजनक स्थति थी[५५५५]। एक ग्रहस्थ के मुख्य तीन कार्य होते थे, प्रथम खेतों को जोतना दूसरा मिटटी को कृषि योग्य बनाना तीसरा सिंचाई करना व फसल को बाहर निकाल कर भूसी से अलग करना था। इसके दूसरी और बौद्ध भिक्षुक का मुख्या कार्य अपना तथा समाज का आध्यात्मिक उत्थान करके सम्बन्धों से मुक्ति पाना था[६६६६]। इस तरह से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध भिक्षुक किस प्रकार से आर्थिक स्थिति को समझते हुए कृषि कार्य को महत्व देते थे[''''']। प्रस्तुत शोध पत्र अनुसार बौद्ध ग्रन्थ ''चुल्लवग्ग एवं अंगुतर निकाय'' में किसान कृषि की सम्पूर्ण प्रक्रिया को चलाने का दायित्त्व निभाता था जैसे भूमि को जोतना, बीज बोना, कृषि की सुरक्षार्थ बाड़ो का निर्माण, खरपतवार को निकालना, फसल पक जाने पर काटना व गट्ठरो में बांध कर बैलगाड़ी द्वारा खल्या भूमि जिसे खल–मंडल कहते थे, तक ले जाना वहां अन्न को भूसे से अलग करना फिर अन्न को संग्रालय में भिजवाना आदि कार्य किये जाते थे जिससे तत्कालीन अर्थव्यवस्था चल सके[४४४४४]।

कृषि की उन्नति के लिए पशुधन की आवश्यकता थी। बौद्ध ग्रंथो में पशु, अन्न व बल शोभा तथा सुख के स्त्रोतों है, इसलिए इस समय गाय और बैल वध ना किये जाने वाले पशु थे। कृषि कार्य में लगे लोगों की पहचान ''सुतनीपात'' गाय–बैल को पालने वाले के रूप में करता है[५५५५५]। ग्रहपतियों का मुख्य कार्य

[६६६] *विनयपिटक,* राहुल सांस्कृत्यायन (हिन्दी अनुवाद), सारनाथ, 1934, पृ. 247.

[''''] *जातक, पूर्वोक्त,* पृ. 445.

[४४४४] मिश्र, जी0 एस0 पी0, *प्राचीन भारतीय समाज एवं अर्थव्यवस्था,* जयपुर पब्लिशिंग हाउस, 1954, पृ. 157.

[५५५५] *सयुंक्त निकाय,* प0 टे0 लो0 लंदन, 1884–1904, 4/314/317.

[६६६६] राव, राजवंत, *भारत में कृषि एवं कृषक समुदाय,* प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली, 2010, पृ. 165.

['''''] राव, राजवंत, *पूर्वोक्त,* पृ. 165.

[□□□□□] मिश्रा, शोभा, इ३ंत्क्स्व]पृ 75.

[□□□□□] *सुत्तनिपात,* महाबोधि सोसाइटी, 1951, वासेठ–सुत्त्म, 19–पृ. 164.

गाय–बैल की रक्षा करना था। बौद्धों ने पशुबलि की निंदा की और पशुओं को ना मारने पर बल दिया जो की कृषि कार्य में सहयोगी साबित हुआ और अर्थव्यवस्था को मजबूती मिली।

बौद्ध काल में बढती तकनीक व व्यवाहरिक अनुभव के कारण कृषि में विभिन्न उपकरणों जैसे हल, फावड़ा, हंसिया का प्रयोग होने लगा था जिस से सभ्यता का निरंतर विकास हो रहा था[1]। पाली में लिखित बौद्ध ग्रंथो में वर्णन मिलता है, कि हल और बैल की सहायता से बीज को ठीक समय पर बोया जाता था जो की सही समय पर तैयार होकर अच्छी फसल देता था[2] और अच्छी फसल लेने के लिए सिंचाई की बहुत आवश्यकता होती थी ''कुनाल जातक'' में शाक्यों और कोलियों के बिच रोहिणी जल विवाद का प्रसंग आया है। इसके अतिरिक्त कुएं, तालाब, नहरों और बांध आदि कृत्रिम जल संसाधनों का निर्माण व्यक्तिगत व राज्य द्वारा करवाया जाता था[3]।

बौद्ध ग्रन्थ विनय पिटक में विभिन्न अन्नों एवं कृषि उत्पाद का विस्तार से वर्णन किया गया है। धान इस समय की प्रमुख फसल थी जो की दो प्रकार की थी ब्रीहि और शालि[4]। जों के साक्ष्य जातक कथाओं से प्राप्त होते है इसके अतिरिक्त ''गोधूम (गेंहू), मुग्द, यव, कंगु (बाजरा), वटक तथा कुदुसक'' अन्य खाद्यान थे[5]। बौद्ध साहित्यों में ''ईख[6] एवं कपास[7]'' की खेती से संबधित अनेक उदाहरण प्राप्त होते है जो कि अर्थव्यवस्था के मुख्य स्त्रोत थे इसके अतिरिक्त अन्या फसलो में ''मटर[8], सरसों[9], मसूर[10], उड़द[11], सन[12] तथा पान[13]'' आदि के साक्ष्य भी प्राप्त होते है। मसालों की खेती में ''मिर्च, लहसुन[14], हल्दी[15], अदरक, हिंग, जीरा[16]'' वाणिज्यक फसल थी। जिस के ऊपर तत्कालीन व्यापारीक अर्थव्यवस्था आधरित थी।

बौद्ध ग्रंथो में एक और प्रचुर अन्न उत्पादन के संकेत मिलते है वंही दूसरी और अकाल और दुर्भिक्ष के भी साक्ष्य प्राप्त होते है। इस समय जनसमान्य अपने पालतू पशुओं को खाकर पेट भरता था और भिक्षुओ

---

[1] मिश्र, जी0 एस0 पी0, *प्राचीन भारतीय कृषि एवं कृषक समुदाये,* जयपुर पब्लिशिंग हाउस, 1955, पृ. 162.
[2] *दीर्घनिकाय,* सम्पा0 रिज डेविड्स, लन्दन, 1911, पृ. 4.34.
[3] जातक *पूर्वोक्त,* पृ. 378.
[4] मिश्र, जी0 एस0 पी0, *पूर्वोक्त,* पृ. 249–353.
[5] *अंगुत्तर निकाय,* भाग–3, सम्पा0 भिक्खू जगदीश कस्यपो, पालि प्रकाशन, बिहार सरकार, 1960, पृ. 349.
[6] *महाजनक जातक,* (6/539), अनुवादक भंते सियारन, बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी, 2002, पृ. 41.
[7] *कलायामुट्ठी जातक,* (2/176), ई0वी0कावेल (अग्रेंजी अनुवाद), कैम्ब्रिज, 1794–1913, पृ. 253.
[8] *छन्दन्त जातक,* अनुवादक भंते सियारन, बुद्धिस्ट पब्लिकेशन सोसाइटी (5/514), पृ. 126.
[9] *महाउमंग जातक,* (6/546), पृ. 369.
[10] *सुसीम जातक* , (4/411), पृ. 55.
[11] *थुस जातक,* (5/338), पृ. 289.
[12] *महासिलन जातक,* (1/51), पृ. 55.
[13] *आसिलक्खण जातक,* (2/216), पृ. 70.
[14] *महाउम्मग जातक,* (6/546), पृ. 353.
[15] *लोक जातक,* (3/274), पृ. 87.
[16] *कक्कारू जातक,* (3/325), पृ. 252.

को भी यही प्राप्त होता था[६६६६६६६]। राज्यों द्वारा अकाल से मुक्ति के लिए उपवास, दान आदि कार्य किये जाते थे[''''''''']।

बुद्धघोष अनुसार कृषि ऊपज का दसवाँ भाग कर के रूप में राजा को दिया जाता था[¥¥¥¥¥¥¥¥¥¥]। जातको में इसे रज्जोभाग के नाम से जाना जाता है[¥¥¥¥¥¥¥¥¥¥]। जो गृहस्थ करों का भुगतान करते थे उन्हें ''कस्सको गहपतिको – कर – कारको – रासि – वद्धको'' कहा जाता था[६६६६६६६] और यह कर देने का मुख्य कारण राज्य द्वारा प्राप्त सुरक्षा थी यही कर राज्य की अर्थव्यवस्था का मुख्या आधार था।

प्रस्तुत शोध पत्र के विवरणों से स्पष्ट होता है कि बौद्ध कालीन अर्थव्यवस्था में कृषि अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती थी। उसी समय लोहे के प्रयोग ने छठी शताब्दी ईसा पूर्व में कृषि कार्य में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया और अब व्यापार भी वस्तु विनमय के स्थान पर मुद्रा विनमय के माध्यम से होने लगा था और इस व्यापारिक व्यवस्था के कारण तत्कालीन समाज में धन एकत्र करने की होड़ लग गयी जो की कृषि कार्य करके प्राप्त किया जा सकता था। क्योंकि इसी समय वाणिज्यक फसलों के रूप में ''ईख, कपास व मसालों'' की खेती की जाती थी। परन्तु वर्तमान समाज में फैली वर्ण व्यवस्था अनुसार कृषि का कार्य वैश्य वर्ण का था और आर्थिक लाभ लेने के लिए सभी वर्ण के व्यक्ति कृषि करने लगे थे। बौद्धो द्वारा पशुबलि का विरोध व कृषि तकनीक का आना इन सब कारणों की वजह से बड़ी मात्रा में कृषि अधिशेष प्राप्त होने लगा जिस से समाज में ऋण, व्यापार–वाणिज्य, राजस्व, शिल्प एवं उद्योग, नगरीकरण का विकास हुआ और जो की मौर्य काल में विकसित स्वरूप में दिखाई देता है।

निष्कर्षः

इस शोध पत्र के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि बौद्ध साहित्य में वर्णित कृषि अर्थव्यवस्था न केवल उस समय की आर्थिक और सामाजिक स्थितियों का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत करती है, बल्कि यह हमें उस समय के समाज की गहन समझ भी प्रदान करती है। इस अध्ययन से यह भी पता चलता है कि प्राचीन कृषि पद्धतियों में निहित ज्ञान और प्रथाएँ आज के संदर्भ में भी प्रासंगिक हैं, और वे समकालीन कृषि और आर्थिक नीतियों के लिए प्रेरणा स्रोत बन सकती हैं। इस प्रकार, बौद्ध साहित्य में वर्णित कृषि अर्थव्यवस्था का अध्ययन न केवल ऐतिहासिक दृष्टि से, बल्कि आधुनिक समाज और अर्थव्यवस्था के विकास के लिए भी अत्यंत महत्वपूर्ण है।

[६६६६६६६] *महावग्ग,* सम्पादक–भिक्षु जगदीश कश्यप, आईव वीव हार्नन का अंग्रेजी अनुवाद 6 बुक ऑफ डिसिप्लिन, पृ. 235–36.
[''''''''] *जातक भाग–2, पूर्वोक्त,,* पृ.367, भाग–5, पृ. 193.
[¥¥¥¥¥¥¥¥¥¥] *कुरुधम्म जातक,* 276, पृ. 99.
[¥¥¥¥¥¥¥¥¥] *जातक, पूर्वोक्त,,* पृ. 378.
[६६६६६६६] *दीर्घनिकाय, पूर्वोक्त,* पृ. 5.37.